ॐ

अंधकार

धर्म,अर्थ,काम,मोक्ष

विनीत

दोहे

सत्य को सत्य को ना माना, ऐ मूर्ख इंसान।

जैसे जल ही सत्य होय, और ता मन के बखान।

आकार दे दियो चित्त से, सत्य तो निराकार होआए।

यथा मृत्तिका सत्य होते, बाकी नश्वर हुआये।

खुद की माता काट के, झंडा देश का फहराए ।

देश मा खुशी ऐसे बांटे, जैसे सब सुखी होआये ।

धरती माता नाम लियो, माता माना ना कोई ।

जैसे गाय को माता कहे, बाद में देह कटाई ।

मूर्ख संगति मैं गया, चरित्र समाय गयो मोय।

युद्ध विद्वान दुश्मन से, मिली सिख बड़ी मोय।

मृत्तिका को देख के, देह बनायो आकार।

सत्य तो बस सत्य कहो, और तो मन के विकार।

द्वेष तो होय मन का, सत्य तो ना झुठलाए।

आकार बदलाय मन से, सत्य तो सत्य कहाये।

आजादी वाज़ादी कोई न, सबका चाहे नाम।

एक बार जो पा लियो, फिर कियो न कोई काम।

भाषा वासा कौनो न, ई सब मन के बखान।

जा से समझे जोन, ओसे होत पहचान।

जाति न इंसान की, चरित्र से होत पहचान।

जाकी जाति जैसी, वैसा बन गयो इंसान।

भोग भोग सब भोग लियो, तबहो न मन को आराम।

जैसा मन तुम रखियो, वैसे बढ़त बयान।।

इंद्रियों की हीनता, उको कहत महान।

और अगर जो नीक कहे, उको कहै बौरान।

शरीर ता एक चीज है, जा कि होत नुमाइश।

जा का जतना निक है, उकी उतनी अजमाईश।

राम-राम तो सब करे, जानत ना कौनो राम।

एक बार बस राम कियो, बन गयो बङे महान।

शरीर में डाल जनेऊ, चले पहिन के भगवा।

ज्ञान बिखेरे ऐसे जैसे , लागत बड़े महंत।

ज्ञान तोल दियो पैसे से, ज्ञान कहा से आय।

लागत बहुत बड़े ज्ञानि है, तभौ कछु न आए ।।

ऐसों पंथ को लाइए , जामे सबको होय।

एक एसो क्षण होये , जामे सुखी सब कोय।

पंथ के कट्टर सब भयो, कर्म कियो न नीक।

धर्म शब्द बस नाम का, जा से लड़े सब कोए।

अगर दोसर कह दियो, निक कहे सब कोए।

पर कोई नीक कहे, तो फिर माने न कोई।

वासना रे वासना, तुझसे बड़ा न कोय।

जैसे जैसे बढ़त चली, वैसे बुद्धि लेत चली।

कोय कहे तुम ई करो, कोई कहे कुछ।

कर-कर के सब कियो, तब हो मांगे भीख।

मैं - मैं रोज कियो, जो कुछ है सब मैं।

आखिर में जब चला गयो, न रहो मैं न देह।

अपने मन सा सोच के, ईश्वर दियो बनाए।

विघा तो बस नाम की, भोग में सब कुछ दिखाए।

धर्म गयो तो, तो कर्म गयो।

ज्ञान गयो तो, लज्जा-लाज सब गयो।

आधुनकि बन गए ज्ञान से, जासे खुद ही रोए।

ऐसा ज्ञान कौनो काम काम, बाद में सबकोय ढोए।

राम नाम सत्य है, सत्य न जाने कोए।

जीकी दृष्टा निक है, ऊके निक कहे सब कोए।

शिक्षा में भी भोग दियो, भोग ही सब कुछ खाए।

विघा तो बस नाम की, एक दूसरे से द्वेष बढ़ाए।

बोल त बस नाम के, धुन से बढ़त है मान।

नियति की ही माया ये, जा का समझ न पाए।

जाति बाट दियो ज्ञान की, जामे चरित्र समाय।

जा का जैसा चरित्र, उको वैसे रहाये।

देह बना दियो ज्ञान की, सोअत काहे न ऊठाए।

नाम तो बस वाक का, ब्राह्म इहे होआए।

दुख तो बाट दियो अपना, पर बुझा न कोई।

रो-रो के तब आँसू बोले, तू काहे को रोए।

भला करन को चाह गया, फिर भी कछु न कीन।

मन को मनावत न माना, पहले क्यूँ तू सोच ना।

हुनर के नाम पर, हुई समाज बेढंग।

हुनर त बस नाम का, ज्ञान से मिलत ब्राह्म।

हुनर को ढूढन मैं गया, जैसे पुष्प स्वतः सुगंध।

मन भोग माँगत रह गयो, भोग में हुए अंध।

संत कहे सब माया है, धन बटोरे खूब।

ऐसो ज्ञान का क्या फायदा, जामे खुद ही डूब।

मोल ना करे इंसान का, काम से कहत तुम नीक।

काम है सब देह का, इंसान की नजर है फीक।

ध्यान लगाकर एक जगह, कहत करे हम योग।

मन तो रोके न रुके, जामा बंधे है भोग।

मेरा मन तो रोए गयो, राष्ट्र भविष्य सोच।

विघा ही जब बेच दियो, काहे के ये भोग।

काम को रोकन सब गयो, रोके रुके न कोए।

हवा को जैसे रोकें चाहे, मूर्ख ही करे यह कोई।

बोल मीठे बोल के, पीछे से देत छूरा भोंक।

जैसे मोर की सूरत अच्छी, खाए रोज बड़े कोप।

बोली की भी माया देख, करावत नीक बड़े काम।

बाद में फिर गला काट के, कहाये नीक इंसान।

सुख के मारे जीव सारे, भटकत इधर-उधर।

सुख तो उके भीतर बैठो, फिर यो ढूढे किधर।

कानून बना दियो इंसान ने, धर्म कहाँ से होय।

धर्म गयो तो सब गयो, जासे सबको रोए।

वेद विरुद्ध तो विद्या होय, भोग पढ़ें को शिक्षा।

वेद बिना जब न होय, तो कर्म कहाँ से अच्छा।

नियति रास्ता दिखा रही, देह भोग में अंधी।

समय के समझे न समझे, जब मोह में डूबी।

भिक्षा मांगे ब्राह्म गयो, भिक्षा न दिजो कोई।

जैसे ज्ञान आवाज देवे, पर बुझे न कोई।

काम को रोकन में चला, काम रुके न कोई।

हवा को जैसे रोकें चाहे, यह मूर्ख ही करे कोई।

भिक्षा मांगे ब्रह्म गयो, भिक्षा न दिजो कोई ।

जैसे ज्ञान आवाज देवे, पर बुझत ना कोई।

खुद की नजर मा गिर गयो, दूसरन की नजर मा नीक।

गिरता चलो मैं ऐसे गयो, ऊहे कहत न ठीक।

मारना था सो मर गया, मौत का न कौनो हिसाब।

खुद के कारण मर गया, देत किस्मत की लाग।

बोल मीठे मीठे बोलत हैं, देत पीछे से छुरा ख़ोप।

जैसे मोर के सूरत अच्छी, खाए रोज बड़े बड़े कोप।

बोली कि भी माया देख, करावत नीक बड़े बड़े काम।

बाद में फिर गला काट दियो, कहाये नीक इंसान।

कानून बना दियो इंसान ने, धर्म कहां से होय।

धर्म गयो तो सब गयो, जासे सबको रोए ।

वेद विरुद्ध तो विद्या होय, भोग पढ़ें को शिक्षा।

वेद बिना जब धर्म न होय, तो कर्म कहाँ से अच्छा।

नियति रास्ता दिखा रही , देह भोग में अंधी।

समय के समझे न समझे, जब बुद्धि मोह में डूबी।

सुख के मारे जीव सारे, भटकत इधर उधर।

सुख तो ऊके अंदर बैठो, फिर ये ढूंढे किधर ।

मैं तो विद्या लेने आया, किस चीज में गया मैं डूब।

समाज के रास्ते चलने पर, खुद ही को गया मैं भूल।

कामना से जगत बने, जगत में मिलया भोग।

भोग में अंधा मैं हुआ, ईश्वर को देत दोष।

खुद ही मनमा सोच लियो, हमसे न कौनो नीक।

नीक तो ऊपर से भयो, अंदर से मांगे भीख।

एक ही आंख से, एक को जीव कहाए।

जो सबको जीवन दे, ऊका निर्दिष्ट बनाए।

कामना मेरी बढ़त गई , रोके रोक न पाए।

बढ़ते बढ़ते बढ़त गई, जासे खुदई बौराए।

एक पेड़ को नीक कहे, एक को कहे बेकार।

पेड़ो को खुद ही बाटे, जासे मन को करार।

पूजा करन को मैं गया, खुद को पूजा न कोय।

कहत आस्था इनमें है, जबकि ईश सब कोय।

एक राम तो मृग को मारे, दूजा राम चींटी को बचावे।

सही राम कौनो को कहाए, सत्य ई कोई ना जाने।

एक ज्ञान भोगन का , जासे बनत विद्वान।

एक ज्ञान होय सत्य का, जासे सब अंजान।

विद्या कहत मैं आ रही, देह कहत रुक जाओ।

जब दुनिया प्रपंच से भरी पड़ी, तो बोध कहा से आओ।

एक जीव जो दुजे को काटे, उको कहे ईश का रूप।

एक जीव जो भोजन ढूंढे, उको कहत सब नीच।

दुख को भूलन मै चाहा, मुकौ कहे सब मूर्ख।

गुस्से से रिश्ता न चाहे, तभै कहे तुम मूक।

दूसरन देखन मैं चला, खुद को देखा न मोए।

खुद देखन मैं चाहा, तो मन कहत ई तुम न होय।

खुदका पिंजरा तोड़ दियो, दूसरा को जंजीर में जकड़ा।

जैसे इंसान ने आजादी पा ली, दूसरन को बना दिया लंगड़ा।

धरती माता नाम लियो, माता माना ना कोई।

जैसे गाय को माता कहे, बाद में शीश कटाई।

राजा कहत सब मेरा है, जनता कैसे रोए।

पेड़ फल खुद ही खाए, तो दुसर कहां से होय।

वर्ण पैसे स बाट दियो, बोध कहा से आय।

जैसे क्षत्रिय बन गयो पैसे से, राष्ट्र कैसे बचाए।

भोग को दे दियो इज्जत, ज्ञान कहां से होय।

देह फंसी माया से, जब बीज भोग के बोए।

दुसरन देखन मैं चला, खुद को देखा न मोए।

ख़ुदको देखन मैं चाहा, तो मन कहत ई तुम न होय।

समय के पीछे जात रे, का रे मन के बखान।

जैसे कच्चे फल को चाहे, ऐ मूर्ख इंसान ।

धर्म का जानत कोई न, खुद से अर्थ बनाए।

धर्म तो ऊके ज्ञान से बने, जासे ब्रह्म मिलाए।

ब्राह्मण चल दियो राष्ट्र से, ब्रह्म कहा से मिलाए।

जैसे अंधा सब होय ता, अंधकार कौने मिटाए।

खुद ही गड्ढा खोद के, कहत बचावे राम।

किस्मत को तू दोष दे, वारे मूर्ख इंसान।

परमात्मा तो रोज कहे, काहे भूलो काम।

जैसे जब कोई दर्शन, मन बन जात बेईमान।

खुद की माता काट के, झंडा देश का फहराए ।

देश मा खुशी ऐसे बांटे, जैसे सब सुखी होअये ।

धरती माता नाम लियो, माता माना ना कोई ।

जैसे गाय को माता कहे, बाद में देह कटाई ।

मूर्ख संगति मैं गया, चरित्र समाय गयो मोय।

युद्ध विद्वान दुश्मन से, मिली सिख बड़ी मोय।

मृत्तिका को देख के, देह बनायो आकार।

सत्य तो बस सत्य कहो, और तो मन के विकार।

द्वेष तो होय मन का, सत्य तो ना झुठलाए।

आकार बदलाय मन से, सत्य तो सत्य कहाये।

<u>लेखक</u>

विनीत